रास पूर्णिमा

१६ अक्टूबर २०२४

।। श्रीराधा ।।

परिचय - आज के इस पावन रासोत्सव में सभी प्रेमी स्वजनों का हार्दिक स्वागत है। वर्षभर जो भी जप-तप-साधन हमारे द्वारा किया गया है, उसका फल आज शरद पूर्णिमा की इस दिव्य रात्री को श्री रासेश्वरी-रसराज अत्यंत कृपा करके हम सभी को प्रदान करते हैं। आज के रासोत्सव के माध्यम से हमारे शुष्क हृदय को निर्मल करने के लिए, उसपर अपना अलौकिक रसवर्षण करने के लिए और हम सब को भक्तिरस प्रदान करने के लिए श्रीयुगल सरकार अपना कृपा-वर्षण कर रहे हैं।

इस रस-दान के लिए परम पूज्य श्री राधा बाबा अपनी पावन चरण पादुकाओं के रूप में यहाँ साक्षात विराजित हैं । उनकी छत्रछाया में बैठकर इस रासोत्सव में सम्मिलित होना हमारे लिए परम सौभाग्य की बात है, क्योंकि आज की यह दिव्य लीला पूज्य बाबा की ही पुस्तक 'केली कुंज' में वर्णित 'रास नृत्य लीला' पर आधारित है।

आज के उत्सव में श्री रासेश्वरी-रसराज की एक विशेष सेवा प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है, चाहे ऑनलाइन हों, अथवा यहाँ श्री राधा निकुंज में उपस्थित हों। वह कैसे? पद-पुस्तिका में लिखे निर्देशानुसार पदों को साथ-साथ गाकर अथवा उनका मन-ही-मन आस्वादन करके तथा उनके अर्थों पर चिंतन करके। श्रीराधा आज के दिवस प्रत्येक जीवात्मा को उसकी इतनी सी चेष्टा के फलस्वरूप अपने प्रियतम श्री कृष्ण का संस्पर्श कराकर सदा-सदा के लिए उसको रोग-शोक से मुक्त करा देती हैं। श्री राधा 'तत-सुख-सुखिया' भाव की मूर्तिमान स्वरूपा हैं। वे इस दिव्य रात्री में स्वयं से जुड़े हुए समस्त जीवों का कल्याण शीघ्रातिशीघ्र और सुखपूर्वक करने के लिए कटिबद्ध हैं। प्रियतम सुखार्थ ही वे ऐसा करती हैं। महारास के द्वारा अपने प्रियतम को सुख देने की इस चेष्टा से प्रियाजी स्वयं आह्लादित होती हैं। प्रियाजी के आह्लाद से सभी जीवों के हृदय में स्थित श्री कृष्ण को सुख मिलता है। इस प्रकार इस महारास में प्रेम-भाव का रस ही प्रवाहित होता है ।

'रास' शब्द का अर्थ है **'रस'** और श्री कृष्ण रस-स्वरूप हैं - **'रसो वै सः'।** परम पूज्य बाबूजी अपनी पुस्तक रास पंचाध्यायी में लिखते हैं ; "एक दूसरे को सुखी बनाकर सुखी होना – इसी का नाम रास है'। आज की इस दिव्य रात्री में ऐसे साधक को प्रियतम श्री श्यामसुंदर अपना अनंत आनंद दान करते हैं एवं अपने प्रेम रस से आप्लावित करते हैं तथा उन्हें सदा के लिए अपने निज परिकर में सम्मिलित कर लेते हैं - यही उनका महारास है।

हम सब ने सुना है कि भगवान ने गोपियों के साथ रास किया था। अब 'गोपी' शब्द का अर्थ देखें - 'गो' यानी इंद्रियाँ और 'पी' यानी पी लेना । 'जो अपनी समस्त इंद्रियों की वृत्तियों को पी ले' अर्थात अपनी समस्त राग-द्वेष रूपी वृत्तियों को भगवान से जोड़ दें, यही गोपी-भाव है। अतः हम भी अपनी इंद्रियों को चारों ओर से समेटकर, अपने-अपने संसारों को भूलकर, श्री युगल-सरकार के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करें कि हमें कल्याण-पथ पर अग्रसर करने के लिए ही वे आज अपनी दिव्य रास नृत्य लीला का दर्शन हमें करा रहे हैं।

तो आइये, सर्वप्रथम श्री रासेश्वरी-रसराज एवं सखियों की स्तुति करें और उनसे प्रार्थना करें कि हमारे जीवन में श्री राधा-कृष्णा के चरणों का स्मरण बढ़े, उनके प्रति समर्पण दृढ हो और हर पल उनके प्रेम-रस का अनुभव होता रहे ।

स्तुति

नमस्तस्मै भगवते कृष्णायाकुंठमेधसे ।
राधाधर सुधासिन्धौ नमो नित्य विहारिणे ।।
ऊँ कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने ।
प्रणतक्लेशनाशाय गोविन्दाय नमोः नमः ।।
राधांकृष्ण स्वरूपांवै कृष्णं राधा स्वरूपिणम्।
कलात्मानं निकुंजस्थं गुरू रूपं सदा भजे ।।
धन वृन्दावन धाम है, धन वृन्दावन नाम।
धन वृन्दावन वृक्ष जो सुमिरै स्यामा स्याम।।
जमुना जल अँचवन करैं, जमुना जल में न्हाहिं।
जहाँ-जहाँ जमुना बहै, तहाँ-तहाँ जम नाहि।।
अष्ट सखी करतीं सदा सेवा परम अनन्य।
राधा-माधव-जुगलकी, कर निज जीवन धन्य ।।
इनके चरण-सरोज में बारंबार प्रणाम।
करुना कर दें श्रीजुगल-पद-रज-रति अभिराम ।।

सखियों ने प्रेम से श्री युगल सरकार को एक अत्यंत सुंदर आसन पर विराजित कर दिया है। हाथों में सुंदर आरती का थाल लेकर सखी आती है। 'आरती' शब्द का तात्पर्य है - **'आ'** अर्थात **'सम्पूर्ण'** और **'रति'** अर्थात **'लगाव'**। तो आइए, सखियों के स्वर-में-स्वर मिलाकर श्री रासेश्वरी-रसराज की आरती उतारें और अपने मन का सम्पूर्ण लगाव उनकी ओर कर उनके प्रेम को ग्रहण करने के लिए अपने चित्त की भूमि को तैयार करें।

गाओ सखी आरती प्रिया और प्यारे की
भानु दुलारी की गिरवर धारी की, हो रास बिहारी की ।

कंचन थार कपूर सजाओ, धूप दीप कर चँवर ढुलाओ
बलि-बलि जावो सखी कुँज बिहारी की
भानु दुलारी की गिरवर धारी की, हो रास बिहारी की।

मोर मुकुट कुंडल वनमाला मुरली अधर धरे बैठे नन्दलाला
हिय में लखोरी छवि बाँके बिहारी की
भानु दुलारी की गिरवर धारी की, हो रास बिहारी की ।

सीस चन्द्रिका की छवि न्यारी स्वेत बरन सोहे तन सारी
ललित किशोरी राधे बरसाने वारी की
भानु दुलारी की गिरवर धारी की, हो रास बिहारी की ।

बैठे सिंहासन दिए गलबाहीं रसिक जनन हिय बसत सदा ही
ब्रज जीवन धन रास बिहारी की
भानु दुलारी की गिरवर धारी की, हो रास बिहारी की ।

भावार्थ - हे सखी! प्रिया और प्यारे की आरती गाओ । वृषभानु जी की लाड़ली की और गिरिराज पर्वत को धारण करने वाले भगवान श्री कृष्ण की आरती गाओ। सोने के थाल पर कपूर सजाओ। धूप और दीपक जला कर चँवर ढुलाओ। हे सखि तुम कुंजों में विहार करने वाले बिहारी जी पर वारि-वारि जाओ। श्री नन्दलाल मोर मुकुट, कुंडल और वनमाला धारण किये हुये, होठों पर मुरली धरे विराजित हैं। श्री रास विहारी की यह छवि हृदय में निहारकर भानुलली और गिरिवरधारी की आरती गाओ। श्री राधाजी के शीश पर चंद्रिका की छवि बहुत ही सुन्दर लग रही है। तथा उनके गौरवर्ण शरीर पर साड़ी अत्यन्त शोभा पा रही है। ऐसी बरसाने वाली वृषभानु लली और गिरिवर धारी श्री कृष्ण की आरती गाओ। श्री प्रिया-प्रियतम गले में बाहें डालकर सिंहासन पर बिराजित है; उनकी यह छवि रसिक जनों के हृदय में सदा ही बसी रहती है। ब्रज के जीवनधन रास बिहारी की और वृषभानु लली की आरती गाओ।

रासेश्वरी श्री राधा ही आज के उत्सव की सूत्रधारिणी हैं, उन्हीं के आदेश से आज यह रास मंच प्रकट हुआ है, उन्हीं के निर्देश अनुसार ललिता आदि सब सखियाँ व मंजरियाँ लीला-व्यवस्था संपादित करती हैं - यहाँ तक कि रासेश्वर श्रीकृष्ण भी श्रीराधा की रुचि और संकेत के अधीन होकर ही अपनी हर चेष्टा का सूत्रपात करते हैं । अतः अगले पद में स्वामिनी श्री राधा अपनी मुख्य सखी श्री ललिता जी को निर्देश देती हैं ..

हे ललिते गुन आगरी! तुम हो चतुर प्रवीन ।
सुन्दर साज समाज को बाँधो ठाठ नवीन ।।
बीन विशाखा जी गहैं चित्रा चतुर मृदंग।
साज सितार सुदेवीजी तुम ललिते मुंहचंग ।।
सारंगी श्री हरिप्रिया हितू रबाब विसाल।
मधुर अलापैं उच्च स्वर इंदूलेखिका बाल ।।
मनमोहन मुरली गहैं, मैं नाचूँ सजि साज ।
नदी बहै पुनि प्रेम की ऐसौ सजै समाज ।।

भावार्थ - हे गुणों की खान ललिते! तुम चतुर और निपुण हो। सुन्दर सामग्री को जुटाकर एक अनोखी व्यवस्था करो। विशाखा जी वीणा संभालें, चतुर चित्राजी मृदंग। सुदेवीजी सितार संभालें और तुम ललिता मुहचंग। श्री हरिप्रियाजी सारंगी संभालें और हितु सखी विशाल रवाब। इन्दूलेखा जी उच्च स्वरों यें मधुर आलाप लें। श्री श्याससुन्दर मुरली बजाएँ, मैं सब के साथ नाचूँ। ऐसी व्यवस्था हो कि प्रेम की नदियाँ बहें।

या विधि आज प्रबंध करो सखि! आनन्द की रस धार बहैगी।
प्रीतम के मन की रुचि है यहि, मेरे हिये अभिलाषा पुजैगी ।।
तुम सबहू सुख पावौ महा रस, आनन्द बेलि हिये उलहैगी।
बरसै घन आनन्द प्रेम महा, तब सहजहि बेली फूलि फरैगी ।।

भावार्थ - हे सखी! आज इस प्रकार से प्रबंध करो कि आनन्द की रस धार बहे। प्रीतम के मन में यही रुचि है, और ऐसा करने से मेरे मन की भी अभिलाषा पूरी होगी । इस महारास के प्रवाह में तुम सब सुख पाओ, हृदय में आनन्द की छटा से जब प्रेम की वर्षा होगी तब यह लता सहज ही (बिना किसी प्रयत्न के) फूलेगी-फलेगी।

श्री प्रिया-प्रियतम अब रास का नृत्य आरम्भ करने के लिए रास-वेदी पर पधार रहे हैं । परम पूज्य श्री राधा बाबा ने अपने रसग्रंथ 'केलि-कुञ्ज' में वर्णन किया है कि रासवेदी पर पधार कर जैसे-जैसे नृत्य का क्रम आगे बढ़ता रहता है, उसी के अनुरूप नृत्य करते-करते श्रीकृष्ण, श्रीराधा और सखियों द्वारा पांच भिन्न-भिन्न आकार धारण किये जाते हैं। पूज्य बाबा ने इन आकारों के मानचित्र भी प्रस्तुत किये हैं और उन्हीं पांच आकारों के संकेत यहाँ रास वेदी के मध्य में दर्शाये गए हैं। श्री रासेश्वरी-रसराज अपनी सखियों के साथ **प्रथम मण्डल के आकार** में स्थित हो जाते हैं । सम्पूर्ण वातावरण में शीतल पवन प्रवाहित हो रहा है और पुष्पों की मधुर, भीनी सुगंध छायी हुई है, जिससे श्री प्रिया-प्रियतम अपना रास-नृत्य आरम्भ करने के लिए और भी लालायित हो रहे हैं। यह अगला पद पूज्य बाबा के 'मधुपर्क' से लिया गया है और उनके प्रिय पदों में से एक है ।

रास मंडल रच्यो रसिक हरि राधिका
तरनिजा तीर वानीर कुंजे ।
फूले जहाँ नीप नव बकुल कुल मालती
माधुरी मृदुल अलि पुंज गुंजे ।।

सुमन के गुच्छ अलि सुच्छ चल बात बल
तरू मनो चहुँ दिसि चँवर करहीं ।
करत रव सारि सुक पिक सु नाना विहंग
नचत केकि अधिक मनहि हरहीं ।।

त्रिगुन जहाँ पवन को गवन नित ही रहत
बहत स्यामल तटनि चल तरंगा।
विविध फूले कमल कोक कलहंस कुल
करत कल कुणित अरू जल विहंगा।।

हेम मंडल रचित खचित नाना रतन
मनहुँ भू करन कुंडल विराजे |
बंस बीनादि मुहचंग मिरदंग वर
सबन मिलि मधुर धुनि एक बाजै ।।

नचत रस मगन वृषभानुजा गिरिधरन
बदन छवि देखि सुधि जात रति मदन की ।
मुकुट की थरहरनि पीत पट फरहरनि
तत्त थेई-थेई करनि हरनि सब कदन की ।।

दसनि दमकनि हँसनि लसनि अंग-अंग की
अधर वर अरुन लखि उपमा को है।
दृग जलज चलनि ढिग कुटिल अलकनि झुलनि
मनहुँ अलि कुलन की पाँतियाँ सोहै ।।

लाग अरु डाट पुनि उरप उरमेइ
तिरप एक-एक गति लेत भारी ।
करत मिलि गान अति तान बंधान सों
परस्पर रीझि कहैं वार्यो वारी ।।

चारु उर हार वर रतन कुंडल ललित
हीर वर वीर स्रवननि सुहाई ।
नील पट पीत तन गौर स्यामल मनौ
परस्पर घन अरु दामिनि दुराई ।।

सखी चहुँ दिसि बनी कनक चंपक तनी
चंद वदनी इक-एक तें आगरी।
नचत मंडल किए चित्त दुहु तन दिए
भूलि गई सकल अप-अपनी सुधि नागरी।।

रमत इहि भाँति नित रसिक सिरमौर दोऊ
संग ललितादि लिए सुघरि सुंदरि अली ।
मनसि वृन्दावन बसहुँ जीवन धना
व्रजराज सून वृषभानुजू की लली ।।

भावार्थ - यमुना के किनारे वेत्र कुंज में रसिक शिरोमणि श्रीश्यामसुन्दर एवं श्रीराधा ने रास-मण्डल की रचना की है। वहाँ पर कदम्ब, मौलश्री एवं मालती को नये-नये असंख्य पुष्प खिल रहे हैं। उनके माधुर्य से आकृष्ट होकर भौरों के समूह मृदुल गुंजार कर रहे हैं। फूलों के गुच्छों को स्पर्श करता हुआ अत्यन्त निर्मल पवन चल रहा है। उसके प्रभाव से हिलते हुए हरे-हरे वृक्ष ऐसे लग रहे हैं मानो चारों ओर चँवर डुला रहे हैं। मैना, तोता, कोयल तथा और भी अनेक सुन्दर-सुन्दर पक्षी कलरव कर रहे हैं। नृत्य करते हुए मोर चित्त को और भी अधिक खींच लेते हैं। शीतल, मंद एवं सुगन्धित समीर का वहाँ सदा ही संचार होता रहता है उसकी गति से तरंगे चंचल हो उठती हैं। ऐसी चंचल तरंगों से युक्त श्यामलवर्णा यमुनाजी बहती रहती हैं। यमुनाजी में विविध प्रकार के कमल (जैसे उत्पल कुशेशय, इन्दीवर इत्यादि) खिले हुए हैं तथा चक्रवाक, कलहंसों का समूह एवं अन्य जाति के जल-पक्षी भी मधुर स्वर कर रहे हैं। रास की गोलाकार स्वर्ण-वेदी नाना रत्नों से जड़ी हुई है। वह ऐसी लगती है मानो पृथ्वी का कर्ण कुण्डल हो। बांसुरी वीणादिक तार-यंत्र, मुहचंग और अच्छे-अच्छे मृदंग - ये सभी मिलकर एक स्वर में मधुर ध्वनि उत्पन्न कर रहे हैं। रस में मग्न होकर राधा-माधव नाच रहे हैं। उनके मुख की शोभा देखकर रति और काम भी बेसुध हो जाते हैं। मुकुट के थरहराने से, पीतपट के फरहराने से तथा 'ताता-थैई' के उच्चारण से जो झांकी उभरी, वह सारे क्लेशों का निवारण करने वाली है। दाँतों की चमक, मन्द हास्य, प्रत्येक अंग की शोभा तथा मनोहर अधरों की अरुणिमा - इन सबके दर्शन की तुलना में और क्या है (अर्थात और कुछ है ही नहीं)? कमलदल से सुन्दर एवं चपल नेत्रों के समीप ही कुंचित केश की लटें ऐसी झूल रही हैं मानों भ्रमरों की पँक्तियाँ सुशोभित हों।...

भावार्थ - ... स्नेहपूरित प्रतिस्पर्धा से वे उरप-तिरप आदि एक-एक गति-विशेष को बड़े ही सुन्दर ढंग से प्रदर्शित करते हैं। वे बंधन युक्त तान लेते हुए परस्पर मिलकर अत्यन्त सुन्दरता से गा रहे हैं और एक दूसरे पर मुग्ध होकर 'बलिहारी-जाऊँ' कह रहे हैं। सुन्दर वक्ष:स्थल का मनोहर हार है और हे सखि! कानों में श्रेष्ठ हीरे के बड़े ही सुन्दर कुण्डल सुशोधित हो रहे हैं। श्री राधिका के गोरे अंगों पर नीला परिधान एवं श्रीकृष्ण के श्याम शरीर पर पीताम्बर ऐसे लग रहे हैं मानों एक ओर बादल ने बिजली को अपनी गोद में छिपा लिया है और दूसरी ओर विद्युच्छटाने वारिदमाला को आक्रोड़ित कर लिया है (अर्थात मानो बिजली ने बादल को आछादित कर लिया हो)। उन्हें चारों ओर से सोने एवं चंपा के फूल-जैसे वर्णवाली चन्द्रमुखी सखियाँ घेरे हुए हैं। वे सब शोभा में एक-से-एक बढ़कर हैं। वे परम प्रवीण सखियाँ गोलाकार मण्डल बनाकर नाच रहीं हैं। उनका चित्त राधा-माधव में ऐसा लीन है कि सब अपनी-अपनी सुधि खो बैठी हैं। ललितादिक सखियों को साथ लेकर रसिकों के शिरोभूषण ये दोनों इस प्रकार नित्य ही विहार किया करते हैं। ये सभी सखियाँ चतुर तथा सुन्दर हैं। वृन्दावनदेवजी कहतें हैं कि 'हे मेरे जीवनधन ब्रजराज लाडले एवं वृषभानु लाडिली! तुम दोनों मेरे हदय-कमल में (नित्य ही) निवास करो'।

नृत्य का क्रम आगे बढ़ाते हुए अब श्री प्रिया-प्रियतम **दूसरे मण्डल** की रचना करते हैं। श्रीराधा-माधव के चरण नृत्य करते हुए थिरक रहे हैं और उनकी लय-से-लय मिलाकर बांसुरी, घुंघरू, पखावज - सभी वाद्य यन्त्र बज रहे हैं। किशोरी जी अपने प्रियतम श्यामसुन्दर को रिझाने के लिए उनकी बांसुरी ले लेती हैं और नवीन ढंग से मधुर तान की रचना प्रस्तुत करती हैं।
आज के उत्सव का अगला पद श्री वृंदावन धाम के रस-निमग्न संत परम पूज्य श्री बालकृष्णदास जी महाराज द्वारा गाया हुआ है जिसे हम उन्हीं के चरणों में प्रार्थना रूप में सादर अर्पित कर रहे हैं ।

वेणु लोगा जिण माधव नाचै। रुमझूम वाघै घूंघर ड़ी।।
ताल पखावज वगाड़ेरी गोपी। कृष्ण वगाड़ै मीठी बांसल ड़ी ।।
दादुर मोर पपईया रे बोले। मीठि-मीठि बोले कोयल ड़ी ।।
ताल पखावज वगाड़े री गोपी। कृष्ण वगाड़ै मीठी बांसल ड़ी ।।
धनी वृन्दावन धनी वंशीवट। धनी नरसैया नी जीवल ड़ी ।।

भावार्थ - बाँसुरी लिए हुए माधव (श्रीकृष्ण) नत्य कर रहे हैं। उनके पैरों में बंधे घुँघरू रूम-झूम ध्वनि कर रहे हैं। गोपियाँ पखावज तथा अन्य वाद्य यंत्र बजा रहे हैं, तथा श्रीकृष्ण मीठी बाँसुरी बजा रहे हैं। दादुर, मोर तथा पपीहा मधुर वाणी में बोल रहे हैं, तथा कोयल भी मीठे स्वर से बोल रही है। यह वृन्दावन धाम धन्य है, तथा यह वंशीवट धन्य है। और इसी से नरसीजी का जीवन भी धन्य हो गया है।

अब रास मण्डली आगे बढ़कर **तीसरे मण्डल का आकार** धारण करती है जिसमें श्री युगल समस्त गोपिजनों के साथ नृत्य करते हैं । अगले पद में एक पंक्ति आती है - "ब्रज जुबतिन की भीर री सजनी" - अर्थात् सारी सखी-गोपी मंडली अपने प्यारे श्री युगल के साथ नृत्य में सम्मिलित होती हैं। परम पूज्य नानाजी ने समझाया है कि हमारे चित्त की भक्तिमयी वृत्तियाँ ही यह गोपियों की भीड़ है, जो चिंतन के माध्यम से श्री कृष्ण से जुड़ी हुई हैं।

श्री रास पंचाध्यायी की टीका में परम पूज्य बाबूजी का आश्वासन है कि चाहे हम पुरुष हों या नारी, हम सभी गोपी बन सकते हैं अगर हम -

1. अपने मन से जगत को निकाल दें
2. भगवान को देने के लिए मन को तैयार कर लें
3. किसी भी कारण से, किसी भी हेतु को लेकर कहीं भी अटकने की भावना न करें

पूज्य बाबूजी ने यह भी स्पष्ट किया है कि शरद पूर्णिमा की रात्रि में श्री गोपांगनाएँ भगवान के सुखार्थ गईं - उनसे सुख लेने नहीं। अतः आइये हम भी अपनी सभी असक्तियों को छोड़कर केवल श्री युगल को सुख देने की लिए ही उनके रास नृत्य का दर्शन करें, और उनसे प्रार्थना करें कि इस गोपियों की भीड़ में वे हमें भी सम्मिलित करने की कृपा करें।

आज गोपाल रास रस खेलत, पुलिन कल्पतरू तीर री सजनी।
सरद विमल नभ चंद विराजत, रोचक त्रिविध समीर री सजनी ।।
चंपक बकुल मालती मुकुलित मत्त मुदित पिक कीर री सजनी।
लेत सुधंग राग रंग नीको, ब्रज जुवतिन की भीर री सजनी ।।1।।
मधवा मुदित निसान बजायो, व्रत छाड्यौ मुनी धीर री सजनी ।
हित हरिवंश मगन मन स्यामा, हरत मदन मन पीर री सजनी ।।2।।

भावार्थ - हे सखि! आज यमुना के पुलिनवर्ती कल्पवृक्षों के समीप गोपाल श्री श्यामसुन्दर रास क्रीड़ा में निमग्न है। शरद के स्वच्छ आकाश में चन्द्रमा सुशोभित है तथा हृदय को आह्लादित करने वाला शीतल, मंद एवं सुगन्धित पवन चल रहा है। चंपा, मौलश्री और मालती आदि के पुष्प खिले हुए हैं। कोकिल एवं शुक आनन्द में डूबे हुए मतवाले हो रहे हैं। वहाँ यूथ-की-यूथ ब्रजबालाएँ शुद्ध स्वरूप में राग-रागिनियों का आलाप ले रही हैं। आकाश में इन्द्र ने भी आनन्दित होकर नगाड़े बजाये। इस महान उत्सव से आकर्षित होकर धैर्यवान मुनियों ने थी अपने संयम-नियमादिक को बहा दिया। श्री हितहरिवंशजी कहते हैं कि उल्लास में भरकर श्री राधा प्रियतम श्यामसुन्दर की अत्यन्त प्रीति-जनित गम्भीर व्याकुलता को प्रशमित कर रही हैं।

आज रस रास रच्यौ पिय प्यारी।
फूलि रह्यो वृंदावन चहुँ दिसि सरद निसा उजियारी ।।
कुंवरि प्रबीन सकल गुन आगरि तैसेइ लाल बिहारी ।
हिय हुलास हरखत सुख बरखत आनंद मगन महा री ।।
प्रीतम के कर तें लै स्यामा मुरली अधरनि धारी।
नइ इक भाँति बजाइ रिझाये होत लाल बलिहारी ।।
ललना लाल नेह नव रंगी निर्तत कला बिस्तारी।
वृन्दावन हित रूप नागरी नागर सब सुखकारी ।।

भावार्थ - आज प्रिया और प्रियतम रास रच रहे हैं। शरद ऋतु की रात्री में चन्द्रमा की चॉदनी से सम्पूर्ण वृन्दावन प्रकाशित हो रहा है। श्रीप्रिया अत्यन्त चतुर एवं समस्त गुणों की खान हैं और वैसे ही गुणों के आगार रसिक बिहारी श्री कृष्ण हैं। मन यें अत्यन्त उल्लासित होकर युगल जोड़ी चारों ओर रस का वितरण कर रही है तथा सभी सखियों को आनन्दित कर रही है। इतने में श्रीप्रिया श्यामसुन्दर के हाथ से मुरली लेकर अपने अधरों से लगा लेती हैं और उसमें इतनी मधुर एवं नवीन तान छेड़ती है कि जिसे सुनकर रसिक बिहारी उन पर रीझ जाते हैं। प्रिया-प्रियतम प्रेम में रंगे अपनी कलाओं का विस्तार करते हुए नृत्य कर रहे हैं। श्री वृन्दावन दास जी कहते हैं कि प्रिया और प्रियतम ही सब सुखों के आश्रय हैं।

निरतत राधा नंदकिसोर।
ताल-मृदंग सहचरी बजावत, बिच मोहन-मुरली कल घोर।।
उरप-तिरप पग धरत धरनि पर, मण्डल फिरत भुजनी भुज जोर।
सोभा अमित बिलोकि गदाधर रीझ-रीझ डारत तृण तोर।।

भावार्थ - श्री राधा-कृष्ण नृत्य में निमग्न हैं। सखियाँ मिलकर मृदंग पर ताल दे रही हैं, और उस ध्वनि के बीच में श्री कृष्ण की बाँसुरी की ध्वनि सुनाई दे रही है। परस्पर में बाहों में बाहें डालकर सभी गोलाकार मण्डल बनाकर 'उरप-तिरप' नृत्य गति से घूम रहे हैं। इस शोभा को देखकर कवि गदाधर जी बारंबार बलिहारी जाते हैं।

रास में नागरी रंग बरसावै।
जो गति लेत लाल मुरली सौं, नूपुर कुँवरि बजावै।।
अहा-अहा प्रीतम मुख बानी, फेरि लेहु यह भावै।
विद्या अखिल स्वामिनी राधा, गति नौतन उपजावे।।
बहुरि अलाप सप्त सुर लेकें, प्रिया ललकि सौं गावै।
वृंदावन हित रूप रीझि कैं, नागर ग्रीव ढुलावे।।

भावार्थ - आज के रासोल्लास में चतुर श्री राधा प्रेम रंग बरसा रही हैं। अपनी मुरली पर श्री कृष्ण जैसी तान भर रहे हैं, श्री राधा उसी के अनुरूप नृत्य कर रही हैं। प्रियतम श्री कृष्ण के मुख से बरबस 'अहा-अहा' की वाणी फूट पड़ती है, और वे श्री राधा से प्रार्थना करते हैं की पुनः वही गति (नृत्य की मुद्रा) दोहरा दें। परम चतुर श्री राधिका श्री कृष्ण की प्रार्थना पर बिल्कुल ही नवीन ढंग से उस गति को दोहरा देती हैं। फिर सात स्वरों के आलाप लेकर श्री प्रिया अतिशय सुंदरता से गायन करती हैं। उनके इस गायन पर रीझकर श्री कृष्ण (ताल या सम पर) अपनी गर्दन हिला देते हैं।

आज के रासोत्सव के जितने भी आकार हैं, उनकी विशेषता यह है कि श्रीराधा की रुचि के अनुरूप श्रीश्यामसुन्दर एक ही समय अलग-अलग रूप धारण करके श्री राधा के साथ भी नृत्य कर रहे हैं और प्रत्येक सखी के साथ भी।

श्री राधा का यह भाव, कि हर जीवात्मा को श्री कृष्ण स्पर्श-सुख मिले, यह प्रियतम श्यामसुंदर को इतना प्रिय लगता है कि वे अपनी प्रिया के चरणों में न्यौछवार हो जाते हैं । इसे दर्शाते हुए अगले पद के आरंभ में वर्णन आता है कि 'जहाँ जहाँ प्यारी पग धरे, लाल धरे दोउ नैन' - जहां-जहां श्री राधा के चरण पड़ते हैं, वहाँ-वहाँ श्री कृष्ण अपने नैन बिछाये रहते हैं । दोनों एक-दूसरे पर ऐसे रीझे हुए हैं कि उनके वस्त्र-आभूषण एक-दूसरे से उलझ ही जाते हैं - कभी श्री कृष्ण का कुंडल श्री राधा की अलकों में उलझ जाता है, तो कभी श्री राधा की बेसर श्री कृष्ण की वनमाला में। परंतु, वास्तव में श्री युगल के चित्त ही आपस में उलझते जा रहे हैं। इस प्रकार **चौथे मण्डल का आकार** धारण कर क्रम-क्रम से कभी श्री राधा नृत्य करती हैं, कभी श्री कृष्ण, और कभी दोनों ही एक होकर महाभाव की स्थिति में डूबकर नृत्य करते हैं ।

उत उरझी कुंडल अलक, इत बेसर बनमाल।
गौर-स्याम उरझे दोऊ, मण्डल रास रसाल।।
प्रेम सरोवर प्रेम की, भरी रहे दिन रैन।
जहँ-जहँ प्यारी पग धरें, लाल धरें दोऊ नैन।।

भावार्थ - इधर श्री राधा के कुंडल में श्री श्यामसुंदर की अलक उलझ गई, उधर श्री श्यामसुंदर की वनमाला में किशोरीजी की नक-बेसर उलझ गई। इस प्रकार से गौर-स्याम श्री राधा-कृष्ण रास मण्डल में परस्पर में उलझ गए। प्रेम रूपी सरोवर दिन-रात इस प्रेम से पूर्णरूपेण भरा ही रहता है। जहाँ-जहां श्री राधा (नृत्य करते हुए) अपने चरण धरती हैं, वहीं श्री कृष्ण के दोनों नेत्र बिछे ही रहते हैं।

सुधंग नाचत नवल किशोरी।
थेइ-थेइ कहति चहति प्रीतम दिसि, बदन चंद्र मनों तृषित चकोरी।।
तान बंधान मान में नागरि, रीझत स्याम कहत हो-हो री।
हित हरिवंश माधुरी अंग अंग, बरबस लियौ मोहन चित चोरी।।

भावार्थ - नवीन शोभा से युक्त श्री किशोरीजी सुंदर नृत्य कर रही हैं। मुख से 'थेइ-थेइ' कहती हुई प्रियतम श्री कृष्ण की ओर देखती जा रही हैं, मानो श्री राधा के नेत्र चकोरी हों और श्री कृष्ण का मुख चंद्रमा। श्री प्रियाजी द्वारा लिए गए तानों की ऊंची-नीची गति को देखकर श्री श्यामसुंदर रीझ गए और प्रशंसा में 'हो-हो' कहने लगे। हित हरिवंशजी कहते हैं की श्री राधा के अंग-अंग की सुंदरता ने श्री कृष्ण के मन को बरबस अपनी ओर खींच लिया है।

मण्डल रास विलास महारस, मण्डल श्रीवृषभानु दुलारी।
मण्डित गोप संगीत भरी, उत राजत कोटिक गोप कुमारी।।
प्रीतम के मुख कंज पे सोभित, अनंदन अंग अनंग निवारी।
ताल तरंगन रंग बढ्यो ऐसे राधिका-माधव की बलिहारी।।

भावार्थ - रास नृत्य के मण्डल में आज महान आनन्द-रस बह चला है। उस मण्डल में श्री राधा अत्यन्त विभूषित हैं। वह रास मण्डल कोटि-कोटि गोपकुमारियों की सुन्दर स्वर लहरियों से गुंजायमान है। प्रियतम श्री कृष्ण के मुख पर छाये हुए आनन्द की शोभा एसी है जो कामदेव की सुंदरता को लज्जित कर दे। समस्त वातावरण ताल और स्वर के रंग से भर रहा है, और सारी सखियाँ श्री राधा-माधव पर बारम्बार न्यौछावर होती जा रही हैं।

लै फिरकी खिड़की ते गिरी। सखी आए गयो मोय प्रेम तमारो।।
मोहन नैन के बान लगे। मुरझाइ परी कोई आए सम्हारो।।
वीर सरीर की यह गति है गई वैद मिले मोय नंद दुलारौ।।
खोलरी घूँघट खोलूँ कहा बसो आँखिन मोर की पाखनवारो।।

भावार्थ - तेज़ गतिसे नृत्य करती हुईव ह गोपी खिड़की से फिरकी की तरह गिर गई। अपनी दशा बताते हुए कहती हैं, “हे सखी! मुझे प्रेम रूपी बुखार ने आ घेरा है। मोहन के नयन रूपी बाणोंसे बिंधकर मैं मुरझाकर गिर पड़ी हूँ, कोई आकर मुझे सम्भालें। अरे सखी! मेरे शरीर की क्या गति हो गई है। नंदके दुलारे ही मेरे वैद्य हैं - वे मुझे कब मिलेंगे?” दूसरी सखी कहती हैं, ”शीघ्र घूँघट खोल और दर्शन कर ले।” पहली सखी हँस के पुनः कहती है, “हे सखी! घूँघट क्यों खोलूँ जब मेरे नयनों में ही मोर का पँख धारण किये हुए श्यामसुन्दर आ बसे हैं।“

नंदलाला बन्सी वाला रे।
बसिया कैसी बजाई गईए रे।।
फिर बजाओ बांसुरी मैं वारी बंसी वारे।
जाते सुनत नींद नहीं रैन गिनत तारे।।
मोहि लई सब ब्रजनारी मैं वारी प्यारे।
सुन छैया, कन्हैया, मनभैया, हरजैया रे।।
सुनत बंसी सुधि-बुध बिसरी, लोक लाज कुल की सगरी।
सुन कान्हा मनमाना जगजाना पहचाना रे।।

भावार्थ - हे सखी, नंद के लाल ने कैसी सुंदर बंसी बजाई है! है बंसीवाले! जिस वंशी ध्वनि से हमारी रातों की नींद उड़ गई है और सारी निशा हम बैठकर तारावली गिनती रहती हैं, हम विनती करती हैं, हमें फिरसे वह बंसी सुनाओ। हमारे मन की आशाओं को तोड़ने वाले कन्हैया! आपने समस्त ब्रज की नारियों का मन हर लिया है।आपकी वंशी ध्वनि को सुनकर हम लोक-लज्जा की सारी स्मृति भूल गयी हैं। सुनो कान्हा! तुम्हारी मनमानी को सारा जग पहचान चुका है।

...आनंद भैया द्वारा प्रस्तुत पद...

इसके पश्चात श्री रास मण्डली नृत्य करते करते अब **पाँचवे मण्डल** की रचना करता है । उनका नृत्य अब गहनता की चरम सीमा को छू जाता है और उनके द्वारा सहज ही चारों ओर अनुपम रस का विस्तार होता जाता है। काल की सीमा से परे, गोलोकधाम में उनका यह नृत्य अनवरत चलता रहता है। इसका संकेत परम पूज्य बाबा के श्री जय जय प्रियतम महाकाव्य में दिया गया है । इस ग्रंथ की महिमा यह है कि भगवान श्री कृष्ण के स्पष्ट आदेश का पालन करते हुए ही पूज्य बाबा ने इस महाकाव्य को प्रकट किया और अपने समक्ष घटित होने वाली लीलाओं को लिपिबद्ध करवाया जिससे उसकी कुछ छींटें हम पर भी पड़ सकें । इस महती कृपा के लिए उनके चरणों में आभार व्यक्त करते हुए आइये प्रियतम काव्य के छंदों का गायन करें।

कब तक चलता वह नृत्य अहो! कैसे बतलाऊँ मैं, प्रियतम!
आँखों में है अब तक पूरित हल्लीसक मुद्राएँ, प्रियतम !
शशधर है ठीक मध्य नभमें वैसे ही गति भूले, प्रियतम!
वे मुग्ध देखते हैं साँवर, बाला है नाच रही, प्रियतम !

वैसे ही कटि झुक जाती है बालाकी पल-पल में, प्रियतम !
अम्बर वक्षःस्थलका भी वह, वैसे ही चंचल है, प्रियतम!
वे कुण्डल भी वैसे ही हैं, हो रहे चपल दोनों प्रियतम!
आनन-सरोजपर वैसे ही प्रस्वेद कणावलि हैं, प्रियतम!

गिर रहे फूल वैसे ही हैं झर-झरकर अलकों से, प्रियतम!
साँवर अपने दुकूलमें है कर रहे चयन उनको प्रियतम!
वैसे ही नाच-नाच करके साँवर भी, बालाकी, प्रियतम!
कर रहे सरस अनुमोदन हैं उन नृत्य-भंगियों का, प्रियतम!

रसमय तन्त्रों के तार सभी वैसे ही झंकृत हैं, प्रियतम!
वैसे ही नूपुरका रुन-झुन सहयोग दे रहा है, प्रियतम!
वैसे ही ताल-बन्ध भी है पल-पल नवीन होता, प्रियतम!
वैसे ही बज उठती हैं वह साँवरकी करताली, प्रियतम!

इसपर मैं किंतु सरस झीना आवरण डालकर ही, प्रियतम!
आगे चलती हूँ बालाको, साँवर को ले दृगमें, प्रियतम!
उस ओर नृत्य उन दोनों का अविराम चल रहा है, प्रियतम!
वे उधर उसी क्षण हैं निकुञ्ज पथमें भी चल पड़ते, प्रियतम!

भावार्थ - यह नृत्य कब तक चलता अहो! मैं कैसे बतलाऊँ? अभी तक आँखों में हल्लीसक मुद्राएँ ज्यों की त्यों परिपूरित हैं। निर्मल मध्य नभ के बीच में चन्द्रमा गति भूले वैसे ही अवस्थित हैं। मुग्ध होकर सब देख रहे हैं, सबकी आँखें केन्द्रित हैं गौर-नीलदम्पति के मनोहर नृत्य पर। पल-पल में राधा किशोरी की कटि उस भाँति ही झुक जाती है। वक्षस्थल का अञ्चल भी वैसे ही चञ्चल हो रहा है। दोनों कर्णकुंडल भी वैसे ही चञ्चल हो रहे हैं, और मुख कमल पर वैसे ही प्रस्वेदकण झलमला रहे हैं। अलकों से सुमन झर-झरकर वैसे ही रासस्थल को विभूषित कर रहे हैं। नील सुन्दर अपने पटके में उन सुमनों को चयन करते जा रहे हैं। उस भाँति ही नाच-नाचकर साँवर भी बाला की नृत्यभंगिमा का सरस अनुमोदन कर रहे हैं। रसमय तन्त्रों के तार वैसे ही झंकृत हो रहे हैं। नूपुर का रुनझुन शब्द वैसे ही सहयोग दे रहा है। ताल की रचनाएँ उस भाँति ही पल-पल में नवीन होती जा रही हैं, और वैसे ही रह-रहकर नीलसुन्दर की हाथों से ताली भी बज उठती हैं। अस्तु। इस पर मैं एक सरस झीना परदा डालकर ही आगे चल रही हूँ। साँवर को, राधाकिशोरी को अपनी आँखों में लिए हुए ही आगे बढ़ रही हूँ। उस ओर उन दोनों का नृत्य भी बिना विराम चल ही रहा है। साथ ही उधर देखो, उसी क्षण वे निकुञ्जपथ में भी चल पड़े हैं।

श्री प्रिया-प्रियतम ने अपने इस दिव्य रासनृत्य में, इस रस वर्षण में हमें भी सम्मिलित होने का सौभाग्य प्रदान किया, इसके लिए आभार रूप में आइये सब सखियों-मंजरियों के साथ मिलकर हम भी विभिन्न सेवाओं के माध्यम से उनका श्रम दूर करें - कभी उनको जल पिलाकर, कभी उनको पंखा झलकर, कभी तृण तोड़कर उनकी नज़र उतारकर, कभी उनको सुस्वादु व्यंजन पवाकर।

रास करि बैठे दोऊ पवन करति कोऊ।
लै-लै अंचल सौं पौछे स्रम वारि री।।
करति प्रसंस कोऊ प्रेम भींजिं रहीं कोऊ।
कोऊ रही रीझि बिबि बदन निहारि री ।।
कोऊ पुहुपांजुलि वारें कोऊ तृन तोरि डारें।
कोऊ जल पीबत हैं बार-बार वारि री ।।
कोऊ रीझि गावनि पै कोऊ रीझि निर्तनि पै।
वृन्दावन हित रूप करें मनुहारि री ।।

भावार्थ - अद्भुत रास करके श्रीप्रिया-प्रियतम सुन्दर सिंहासन पर आसीन है। उनको विश्राम देने हेतु कोई सखी उन्हें पंखा झलने लगती है और कोई अपने आंचल से उनके श्रम बिन्दु पोंछने लगती है। एक सखी उनकी प्रशंसा करती है तो दूसरी सखि उनके प्रेम में डूबती जा रही है। कोई सखी पुष्पांजलि छोड़ती है, कोई तृण तोड़ती है, कोई जल पीकर वारि-वारि जाती है। कोई गाने पर, कोई नृत्य पर रीझ रही है। वृन्दावनदासजी कहते हैं कि कोई सखी दोनों को लाड़ करने में व्यस्त है।

श्री प्रिया प्रियतम ने भोग आरोग लिया है, और अब किशोरीजी के नयन निद्रा से बोझिल होने लगते हैं। अपनी स्वामिनी की यह दशा देखकर सखियाँ समझ जाती हैं कि श्री प्रिया-प्रियतम अब अपने शयन कक्ष में पधारने के लिए इच्छुक हैं । उनका शयन भी वास्तव में उनकी ऐकान्तिक लीला ही है, जहां वे महाभाव में डूबकर प्रत्येक जीव के अंतःकरण में रस का संचार करते रहते हैं।

वारति अलि मृगनैंनी आरति ।
निज सहचरि इच्छा अनुसारन समुझि सैंन की सैना-बैंनी ।।
जगमग जोति जगत दीपावलि कनक थार मधि सचित सुचैनी।
श्रीहरिप्रिया हितवाय हियन में लै बलाय सनमुख सुख देंनी ।।

भावार्थ - मृगनैनी सखी श्रीप्रिया-प्रियतम की आरती उतार रही है। अपनी सखी के आँखों का निद्रापूर्ण संकेत समझ रही है, और आखों-ही-आखों में परस्पर में संकेत करती जा रही हैं। सुन्दर सजी हुई सोने की थाली के मध्य में आरती का दीपक दीपावली की ज्योति की भाँति जगमगा रहा है।

लँड़ैती जू के नैननि नींद घुरी।
आलस-बस, जोबन-बस, मद-बस, पिय के अंक ढुरी ।।
पिय कर परस्यौ सहज चिबुक सौं औचक चौकि परी ।
बावरी सखी 'हित व्यास' सुवन बल देखत लतन दुरी ।।

भावार्थ - श्री लाड़लीजू के नयनों में नींद भरी हुई है। आलस, यौवन और मद के नशे में मग्न होकर वे प्रियतम की गोद में लुढ़क गई। श्री श्यामसुन्दर ने हलके से जब उनकी ठोड़ी का स्पर्श किया तब किशोरी अचानक चौंक के उठ गई। हित व्यास जी कहते हैं कि प्रेम में बावरी एक सखी इस सारे दृश्य को फूलों की लताओं में छिपकर देख रही हैं।

सुनो प्यारी हो कुँवरि राधे! निकुंजन पौढ़िये सकुमार।
भलो रस हो रास में आज, रह्यौ तुम्हरी कृपा अनुसार।।
रैन अबहो बहुत थोरी रह्यो तजि केलि चतुर सुजान।
रसिक प्रीतम सदा मेरो हा-हा हँसि कहो कृपानिधान।।

भावार्थ - एक सखी कहती हैं - 'हे राधाकिशोरी! प्रियतम सहित निकुंज में शयन करने की कृपा करें। आज आपकी कृपा से रास में अत्यन्त सुन्दर रस का प्रवाह बहा है। रात अब बहुत थोड़ी रह गई है। इसलिए, हे चतुर! हे सुजान! रास केलि को विराम दे दीजिए (अर्थात विश्राम कीजिए)। कवि रसिक के निज प्रियतम श्रीकृष्ण ने (हाँ-हाँ कहकर) हँसते हुए अपनी सहमति प्रदान की।

आनन्द रहो ब्रज चंद्र दोऊ
शुभ सगुन सदा तुमको आवें ।
नित ही रस केलि करो मिलिके
हम निरखि-निरखि अतिशय सुख पावैं ।।
यह धन हमसे रंकन को मिल्यो
हम कहा लौं विधाता के गुण गावें ।
नारायण आशीष करें हम तुमहूँ पौढ़ो हमहूँ जावे ।।

भावार्थ - सखियाँ गाती हैं - "हे श्रीयुगल! आप सदा आनन्दित रहें, सभी शुभ शगुन आप पर नित्य ही आयें। आप नित्य ही रस केलि करते रहें, एवं हम देख-देख कर आनन्दित होते रहें। यह धन (आपकी सेवा) हम जैसे दरिद्रों को मिला, इसके लिये हम कहाँ तक विधाता के गुण गायें। नारायणदास जी कहते हैं कि सखियाँ आशीष देती हुई विनती करती हैं कि आप भी शयन करें और हम भी आपको एकान्त में छोड़ दें।

कुंज पधारौ राधे रंग भरी रैन ।
रंगभरी दुलहिन, रंग भरे पिया, स्यामसुन्दर सुख दैन ।।
रंगभरी सयनी बिछी सेज पर, रँग भर्यौ उलहत मैन ।
रसिक बिहारि पिय प्यारी दोऊ मिल, करौ सेज सुख सैन।।

भावार्थ - कुँज पधारो राधे, आनन्द भरी रात्रि है। एक ओर प्रेम भरी दुलहन (आप) हैं, दूसरी ओर प्रेम से भरे सुख की खान प्यारे श्यामसुन्दर हैं। ऐसी सुखद सेज बिछी हुई है जिसमें ऐसा रंग भरा हुआ है जो कामदेव की सुंदरता को भी उलाहना दे रहा है। रसिक बिहारी जी प्रार्थना करते हैं कि प्रिया-प्रियतम दोनों मिलकर सुखद सेज पर शयन करें।

हौले-हौले महल की धरनि चरण धरंत ।
अति मदमाति लाडली गजगत लिएँ डुलंत ।।
लाडली-लाल के मदमाती गजगत लिएँ डोले ।
मरकत मणि के अहल-महल में चरण धरत हौले-हौले ।।
लटकी लट अटकी अंसनि पर चटकीली चख लौले ।
लसन-हसन में दसन सिखर दुति रंगी-रंग तमोले ।।
झुक-झुक देत लेत अधरामृत समरस पान कपोले ।
श्री हरिप्रिया हितवाय जियन में वारत प्राण अमोलें ।।

भावार्थ - धीरे-धीरे महल की भूमि पर पग रखते हुए श्रीप्रिया-प्रियतम मदमस्त चाल से चल रहे हैं। मरकत मणि से सजे हुए महल में वे चरण रखते हुए मन्द गति से चले जा रहे हैं। झूमती हुई लटें कन्धे पर ही उलझकर रह गई और चमकती हुई आँखें झुकने लगीं। मनमोहक हंसी में दाँतों की सफेदी पान के रंग में रंग गई है। श्रीप्रिया-प्रियतम झुक-झुककर परस्पर अधरामृत का पान करते हैं तथा उनके कपोलों में पान का बीड़ा सुशोभित है। श्रीहरि प्रियाजी का हृदय प्रेम से भर रहा है। तथा उनका सारा तन, मन और धन इस अनुपम छवि पर न्यौछावर होता जा रहा है।

अब पौढ़न को समय भयो ।
इत ढुर गई द्रुमन की छैयाँ, उत ढुरि चंद गयो ।।
पौढ़ि रहे दोउ सुखद सेज पर बाढ़त रंग नयो ।
रसिक बिहारि-बिहारिन पौढ़े यह सुख दृगन लयो ।।

भावार्थ - अब रात्रि शयन करने का समय हो गया है। इधर वृक्षों की छाया ढल गयी है और उधर चन्द्रमा भी अस्ताचल की ओर चले गये हैं। सुखदायनी शय्या पर दोनों लेटे हुए हैं। प्रतिक्षण अभिनव आनन्द की अभिवृद्धि हो रही है। कवि रसिक कहते हैं कि लीलाबिहारी श्रीकृष्ण और बिहारनि राधा, दोनों ही शय्या पर लेटे हुए हैं। इस झांकी के दर्शन का सुख आँखों को प्राप्त हुआ है, यह कैसा अनुपम सौभाग्य है!

राधे कृष्ण राधे कृष्ण कृष्ण कृष्ण राधे राधे ।
राधे श्याम राधे श्याम श्याम श्याम राधे राधे ।।
जय वृन्दावन जय यमुना, जय वंशीवट जय वृन्दा ।
जय जय जय राधा अभिराम, जय जय जय माधव गुणधाम ।।
जय जय पावन नन्दग्राम, जय बरसाना पूरणकाम ।
जय रासेश्वरी रूप ललाम, जय रसिकेन्द्र शिरोमणि श्याम ।।

इस संपूर्ण रासोत्सव के माध्यम से श्री किशोरीजी की यही चेष्टा होती है कि जो भी उनसे तनिक भी जुड़ा है, उसे वे अपने प्रियतम से जोड़ कर उसे निहाल कर दें। श्रीराधा के इस रस-दान से भाव-विभोर होकर सखियाँ उनके चरणों की वंदना करने लगती हैं। आइये उनके साथ हम भी अपने मन के भाव-सुमन लाड़ली श्री राधा के चरणों में अर्पित करें ।

धनि-धनि लाड़िली के चरन ।
अतिहि मृदुल सुगंध सीतल कमल के से बरन ।।
नख चंद चारू अनूप राजत जोत जगमग करन ।
कुणित नूपुर कुंज बिहरत परम कौतुक करन ।।
नंद सुत मन मोद कारी बिरह सागर तरन ।
दास परमानंद छिन-छिन स्याम ताकी सरन ।।

भावार्थ - श्री लाडली के चरण ही परम धन हैं। वे कमल के समान कोमल एवं सुगन्ध से युक्त हैं। उनके नखों से चन्द्रमा के समान प्रकाश निकल रहा है, तथा सुंदर नूपुर बाँधे वे कुंजों में विहार करती हुई विभिन्न विचित्र लीलाएं कर रही हैं। श्रीराधा के चरण नंदनंदन के विरह ताप को हरने वाले हैं। परमानंददास जी कहते हैं कि श्यामसुन्दर क्षण-क्षण में श्रीजी के उन चरणों की शरण रहते हैं।

राधा नाम कीर्तन

प्रिय नख चरन चंद्रिका कब धौं, इन नैनान निहारौंगी।
सुन्दर सुघर रुचिर रचि जावक, कब प्रिय पाँय पखारौंगी॥
पायजेब सजि नूपुर कब धौं, पग बिछियान सँवारौंगी।
ललित माधुरी चरन सरोजैं, चाँपि कबै उर धारौंगी॥

भावार्थ - श्री प्रियजी के चरण नख की ज्योति को कब निहारूँगी? उन चरणों में सुंदर मेहंदी की रचना करके कब उन्हे सहलाऊँगी? सुंदर पायजेब, नूपुर एवं बिछिया पहनकर कब उन्हें सवारूँगी? (श्री ललित माधुरीजी मन में अभिलाषा करते हैं कि) कब उन चरण कमलों को हृदय में धारण करूंगी?

रहो मेरी आँखनके आगे।
छहियाँ कदम दिये गल बहियाँ, क्या सोवत क्या जागे॥
मृदु मुसक्यात गात अति कोमल, सुरत रंग अँग पागे।
ललित किशोरी रसिक बिहारी नवल नेह अनुरागे॥

भावार्थ - (सखी प्रार्थना करती है कि) आप दोनों मेरी आखों के सामने ही रहिए। कदंब वृक्ष की छाँह में गलबहियाँ दिए हुए आपकी छबि को निहारते रहने में क्या सोना और क्या जागना? (श्री ललित किशोरीजी कहते हैं कि) आप दोनों अतिशय कोमल मुस्कान से युक्त हैं और आप दोनों के अंगों में विहार करने की अभिलाषा झलक रही है। उसपर भी प्रियतम श्री कृष्ण पल-पल नवीन प्रेम में रंगते जा रहे हैं।

ये अभिलाष लडैती मोरी।
तुम लालन संग मुदित बिराजौ, मोहि करो मुख चन्द्रचकोरी॥
देहु कृपा करि बेग छबीली, ललित किशोरी मान निहोरी।
निसिदिन नित्त निकुंज भवनमें, हाजिर रहौं वृषभान किशोरी ॥

भावार्थ - हे श्री लडिलीजी! मेरी ऐसी अभिलाषा है की आप श्री लालजी के सँग प्रसन्नतापूर्वक विराजित रहें, और में आपके मुख चंद्र को चकोरी के समान निहारती रहूँ। हे छबीली श्री राधे! कृपा कर मुझे अपने निकुंज में नित्य निवास प्रदान कीजिए। मैं सदा आपकी कृतज्ञ रहूँगी और सेवा के लिए प्रस्तुत रहूँगी।

श्रीबृन्दाबन बसौं निरन्तर, यही चित्त अभिलासा है।
जुगल माधुरी पान करौं नित, छिन-छिन यही हुलासा है ॥
सदा बसन्त जहाँ नव पल्लव, इक रस बारौ मासा है।
ललित माधुरी ललित त्रिभंगी, ललितहिं रास बिलासा है ॥

भावार्थ - श्री वृंदावन में वास करूँ, यही अभिलाषा है। श्री युगल की रूप-माधुरी को पीता रहूँ, मन में यही उत्साह है। (श्री ललित माधुरीजी कहते हैं कि) जहां ऋतु बसंत सदा ही नव-पल्लव लिए बारहों मास उपस्थित रहता है, उस स्थान पर ललित त्रिभंगी मुद्रा लिए श्री कृष्ण ललित रास विलास करते रहते हैं।

प्यारी नित ऐसेहिं तुम्हें निहारू।
तृण तोरूँ या चंद बदन पै, राई नोन उतारूं॥
निज कर करूँ सिंगार तिहारो, मुख पै भ्रमर बिडारूँ।
नारायण जब तुम कछु गावो, मैं ढिंग साज सवारूं॥

भावार्थ - हे प्यारी! में नित्य ही तुम्हें ऐसे ही निहारती रहूँ! तृण तोड़कर एवं राई-नामक उतारकर (अर्थात नजर उतारकर) तुम्हारा शृंगार करूँ, एवं (तुम्हारे सुंदर मुख को कमल समझकर आकर्षित हुए) भ्रमरों को हटाती रहूँ। (श्री नारायण स्वामीजी अभिलाषा करते हैं की) हे किशोरीजी! जब तुम कुछ गाओ, तब में सुंदर साज सजाकर तुम्हारे साथ बजाऊँ।